ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL**04292**
RNI REG. NO. UPBIL/**2014/66218** **PP. No.- 277-280**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

उत्तर भारतीय एवं दक्षिण भारतीय ताल प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन

सन्तोष कुमार तिवारी

अतिथि प्रवक्ता, संगीत विभाग (वाद्य तबला), जननायक चन्द्रशेखर विश्वविद्यालय–बलिया (उ0प्र0) भारत

Received-22.08.2026, Revised-30.08.2026, Accepted-07.09.2026, E-mail:st37311@gmail.com

सारांशः *भारतीय शास्त्रीय संगीत की दो प्रमुख धाराएँ–उत्तर भारतीय या हिन्दुस्तानी संगीत तथा दक्षिण भारतीय या कर्नाटक संगीत–अपनी राग–पद्धति, गायन–वादन शैली और प्रस्तुति की विशिष्टताओं के साथ–साथ ताल–विधान की समृद्ध परम्परा के लिए भी प्रसिद्ध हैं। भारतीय संगीत में ताल केवल मात्राओं की गणना अथवा समय की माप नहीं है, बल्कि वह संगीत की गति, संरचना, सौंदर्य, लयात्मक तनाव और समाधान को व्यवस्थित करने वाला आधारभूत तत्त्व है। हिन्दुस्तानी और कर्नाटक संगीत दोनों में ताल चक्रीय रूप में चलता है और प्रत्येक आवर्तन के अंत में पुनः प्रारम्भिक बिन्दु पर लौटता है। फिर भी दोनों प्रणालियों की संरचना, पारिभाषिक शब्दावली, ताल की गणना, अंग–विन्यास, लयकारी, वाद्य–प्रयोग तथा प्रस्तुति–पद्धति में महत्वपूर्ण अंतर दिखाई देता है।*

हिन्दुस्तानी ताल प्रणाली में मात्रा, विभाग, सम, ताली, खाली, आवर्तन और ठेका प्रमुख अवधारणाएँ हैं। तीनताल, झपताल, एकताल, रूपक, दादरा, कहरवा, धमार आदि इसके प्रमुख ताल हैं। तीनताल में 16 मात्राएँ तथा चार विभाग होते हैं, जबकि झपताल में 10 मात्राएँ और 2–3–2–3 का विभाजन मिलता है। सम इस प्रणाली का अत्यंत महत्वपूर्ण बिन्दु है, जहाँ संगीतात्मक और लयात्मक क्रियाओं का समाधान होता है।

इसके विपरीत कर्नाटक संगीत की ताल प्रणाली अधिक गणितीय, संरचनात्मक और क्रियात्मक स्वरूप वाली है। इसमें 'सप्त सुलादि ताल' की सात मूल ताल–ध्रुव, मठ, रूपक, झम्प, त्रिपुट, अट तथा एक माने जाते हैं। इन तालों में लघु, द्रुत और अणुद्रुत प्रमुख अंग हैं। लघु की मात्रा जाति के अनुसार बदलती है और पाँच जातियाँ–तिस्र, चर्तुस्य, खण्ड, मिश्र तथा संकीर्ण– तालों की विविधता को जन्म देती हैं। इस प्रकार सात तालों और पाँच जातियों से 35 प्रमुख ताल–विन्यास निर्मित होते हैं।

प्रस्तुत लेख का उद्देश्य उत्तर भारतीय एवं दक्षिण भारतीय ताल प्रणालियों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, संरचना, प्रमुख तत्वों, ताल–विन्यास, लयकारी, वाद्य–परम्परा और सांगीतिक प्रयोग का तुलनात्मक अध्ययन करना है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि दोनों प्रणालियाँ मूलतः भारतीय लय–चिन्तन की समान आधारभूमि से विकसित हुई हैं, किंतु ऐतिहासिक और क्षेत्रीय विकास के कारण उनकी अभिव्यक्ति अलग–अलग रूपों में हुई है। दोनों प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन भारतीय संगीत की वैज्ञानिकता, गणितीयता और सौंदर्यबोध को समझने में विशेष रूप से उपयोगी है।

कुंजीभूत शब्द– ताल, लय,हिन्दुस्तानी संगीत, कर्नाटक संगीत, आवर्तन, ताली,खाली, ठेका, लघु, धुतम्, जाति, अंग, मृदंगम्, तबला,सम।

प्रस्तावना– भारतीय शास्त्रीय संगीत का विकास एक अत्यंत दीर्घ और समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा के रूप में हुआ है। भारतीय संगीत में स्वर और राग जितने महत्वपूर्ण हैं, उतना ही महत्वपूर्ण ताल और लय का स्थान है। राग जहाँ संगीत को भावात्मक एवं सुरात्मक आधार प्रदान करता है, वहीं ताल उसे समय और गति की व्यवस्थित संरचना देता है। भारतीय संगीत में ताल को सामान्य अर्थ में केवल 'बीट' कहना पर्याप्त नहीं होगा, क्योंकि ताल एक निश्चित मात्रा–चक्र के भीतर संगीत को संचालित करने वाली व्यापक अवधारणा है। यह चक्रीय व्यवस्था है जिसमें कलाकार अनेक प्रकार की रचनात्मक स्वतंत्रता के बाद पुनः निर्धारित आरम्भ–बिन्दु पर लौटता है।

भारतीय शास्त्रीय संगीत की दो प्रमुख परम्पराएँ हिन्दुस्तानी तथा कर्नाटक संगीत हैं। हिन्दुस्तानी संगीत का मुख्य विकास उत्तर, मध्य तथा पश्चिमी भारत के विभिन्न क्षेत्रों में हुआ, जबकि कर्नाटक संगीत का प्रमुख विकास दक्षिण भारत में हुआ। दोनों परम्पराओं में राग और ताल की मूल अवधारणा समान है, परंतु उनकी व्यावहारिक संरचना और प्रस्तुति में पर्याप्त अंतर दिखाई देता है। भारतीय संगीतशास्त्र के प्राचीन ग्रंथों में ताल संबंधी विचार अत्यंत विस्तृत रूप में प्राप्त होते हैं। नाट्यशास्त्र, बृहद्देशी और संगीत रत्नाकर जैसे ग्रंथ भारतीय ताल–विचार के विकास को समझने में महत्वपूर्ण हैं। आधुनिक संगीत शिक्षा में भी प्राचीन एवं आधुनिक ताल प्रणालियों के तुलनात्मक अध्ययन को विशेष महत्व दिया जाता है।

हिन्दुस्तानी संगीत में तबला और पखावज ताल के प्रमुख वाद्य हैं। तबले के माध्यम से ताल का 'ठेका' प्रस्तुत किया जाता है। ठेका किसी ताल की पहचान स्थापित करने वाला मूल बोल–विन्यास है। उदाहरण के लिए तीनताल का ठेका 'धा धिन धिन धा' आदि बोलों के माध्यम से पहचाना जाता है। ताल की प्रत्येक मात्रा का अपना स्थान होता है तथा विभाग, ताली और खाली के माध्यम से श्रोता और कलाकार को ताल–चक्र का बोध होता है।

कर्नाटक संगीत में मृदंगम् प्रमुख तालवाद्य है। इसके अतिरिक्त घटम्, कंजीरा आदि वाद्य भी ताल की प्रस्तुति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कर्नाटक ताल प्रणाली में ताल की पहचान केवल उसके बोलों से नहीं, बल्कि उसके अंगों तथा हाथ की क्रियाओं द्वारा भी स्पष्ट की जाती है। लघु, द्रुत् और अणुद्रुत इसके प्रमुख घटक हैं। लघु की जाति के अनुसार बदलती है, जिससे 35 तालों का निर्माण होता है और जाति गति के अनुसार यही 35 तालों से 175 तालों का निर्माण होता है। इस प्रकार कर्नाटक ताल व्यवस्था में गणितीय संभावनाएँ अत्यंत व्यापक हैं।

दोनों प्रणालियों की तुलना से यह स्पष्ट होता है कि हिन्दुस्तानी ताल प्रणाली में ठेका और आवर्तन की अवधारणा का विशेष महत्व है, जबकि कर्नाटक ताल प्रणाली में अंग, जाति, गति तथा गणितीय विन्यास की भूमिका अधिक स्पष्ट दिखाई देती है। फिर भी दोनों प्रणालियाँ लय के चक्रीय स्वरूप, गति, गणना और पुनरागमन के सिद्धांत पर आधारित हैं।

विश्लेषण– भारतीय संगीत में ताल का मूल उद्देश्य संगीत को एक निश्चित समय–चक्र में व्यवस्थित करना है। ताल की इस अवधारणा का विकास प्राचीन भारतीय संगीतशास्त्र में हुआ। कालांतर में विभिन्न क्षेत्रों और संगीत–परम्पराओं में ताल के अलग–अलग स्वरूप विकसित हुए। हिन्दुस्तानी और कर्नाटक संगीत आज भले ही अलग–अलग ताल प्रणालियों का उपयोग करते हों, लेकिन उनकी ऐतिहासिक जड़ें भारतीय संगीत की व्यापक परम्परा में जुड़ी हुई हैं।

हिन्दुस्तानी ताल प्रणाली की सबसे प्रमुख विशेषता उसका चक्रीय स्वरूप है। एक ताल का पूरा चक्र 'आवर्तन' कहलाता है। आवर्तन को कई 'विभागों' में विभाजित किया जाता है और प्रत्येक विभाग में निश्चित संख्या में मात्राएँ होती हैं। 'सम' ताल का पहला

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

और सबसे महत्वपूर्ण बिन्दु माना जाता है। सामान्यतः संगीतात्मक व लयात्मक वाक्यांशों का समाधान सम पर किया जाता है। सम के अतिरिक्त ताली और खाली ताल की आंतरिक संरचना को स्पष्ट करते हैं। आधुनिक विश्लेषणों में तीनताल, एकताल, झपताल और रूपक को प्रमुख उदाहरणों के रूप में देखा जाता है। तीनताल में 16 मात्राएँ 4+4+4+4 के चार विभागों में विभाजित होती हैं; एकताल में 12 मात्राएँ तथा झपताल में 10 मात्राएँ 2+3+2+3 के विन्यास में होती हैं।

हिन्दुस्तानी संगीत में ताल का व्यावहारिक स्वरूप 'ठेका' के माध्यम से स्पष्ट होता है। ठेका किसी ताल की मूल पहचान है। तबला वादक ठेका बजाकर गायक या वादक को लयात्मक आधार प्रदान करता है। कलाकार ठेका के ऊपर आलाप, बोल–आलाप, तान, संलांतप, बंदिश अथवा वाद्य–संगीत की विविध रचनाएँ प्रस्तुत करता है। इस प्रक्रिया में ताल स्थिर आधार प्रदान करता है, जबकि उसके भीतर रचनात्मक स्वतंत्रता बनी रहती है।

हिन्दुस्तानी तालों की संख्या को केवल कुछ लोकप्रिय तालों तक सीमित नहीं किया जा सकता। संगीतशास्त्रीय परम्परा में अनेक तालों का वर्णन मिलता है और आधुनिक व्यवहार में अपेक्षाकृत कम ताल अधिक प्रचलित हैं। एक अध्ययन के अनुसार हिन्दुस्तानी संगीत में 70 से अधिक तालों का वर्णन मिलता है, जबकि नियमित प्रदर्शन में लगभग 20 तालों का अधिक उपयोग होता है।

दक्षिण भारतीय अर्थात कर्नाटक संगीत में ताल प्रणाली का स्वरूप अपेक्षाकृत अधिक संरचनात्मक और गणितीय दिखाई देता है। इसका प्रमुख आधार 'सप्त सुलादि ताल' प्रणाली है। इसमें सात मूल ताल हैं– ध्रुव, मठ, रूपक, झम्प, त्रिपुट, अट और एक। इन तालों की संरचना लघु, द्रुत तथा अणुद्रुत जैसे अंगों से होती है।

लघु कर्नाटक ताल प्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण और परिवर्तनशील अंग है। लघु की मात्रा जाति के अनुसार निर्धारित होती है। पाँच प्रमुख जातियाँ हैं–तिस्र, चतुष्र, खण्ड, मिश्र और संकीर्ण। इनके क्रमशः 3, 4, 5, 7 और 9 मात्रात्मक मूल्य माने जाते हैं। इस प्रकार किसी ताल के भीतर लघु के स्वरूप में परिवर्तन करके उसकी कुल मात्राओं में परिवर्तन किया जा सकता है। यही कारण है कि सात मूल ताल पाँच जातियों के साथ मिलकर 35 प्रमुख ताल–विन्यास उत्पन्न करते हैं।

कर्नाटक संगीत में 'क्रिया' का विशेष महत्व है। ताल को हाथ की निश्चित गतिविधियों से प्रदर्शित किया जाता है। ताल के विभिन्न अंगों को हाथ की थपकी, हथेली को मोड़ने अथवा उँगलियों की गणना से प्रदर्शित किया जाता है। इस कारण विद्यार्थी ताल को केवल सुनकर ही नहीं, बल्कि शारीरिक क्रिया के माध्यम से भी अनुभव करता है। लघु में ताली के साथ उँगलियों की गणना की जाती है, जबकि द्रुत में ताली और हाथ की उलटी गति का प्रयोग होता है। अणुद्रुत एक मात्रा का अंग है।

कर्नाटक ताल प्रणाली में 'आदि ताल' अत्यंत लोकप्रिय है। इसे चतुष्र जाति त्रिपुट ताल के रूप में समझा जाता है और इसकी संरचना आठ अक्षर–कालों की होती है। कर्नाटक संगीत की अनेक रचनाएँ आदि ताल में मिलती हैं। इसी प्रकार रूपक, मिश्र चापु और खण्ड चापु भी महत्वपूर्ण हैं। चापु तालों की संरचना सुलादि सप्त तालों से कुछ अलग होती है और वे कर्नाटक संगीत की लयात्मक अभिव्यक्ति को अधिक विविध बनाते हैं।

दोनों प्रणालियों की तुलना करने पर पहला महत्वपूर्ण अंतर उनकी मूल संरचनात्मक इकाइयों में दिखाई देता है। हिन्दुस्तानी प्रणाली में 'मात्रा' और 'विभाग' की अवधारणा केंद्रीय है, जबकि कर्नाटक प्रणाली में 'अंग' और 'जाति' प्रमुख हैं। हिन्दुस्तानी ताल की पहचान उसके ठेका से होती है, जबकि कर्नाटक ताल में ताल की संरचना हाथ की क्रियाओं, अंगों तथा अक्षर–कालों से अधिक स्पष्ट होती है।

दूसरा अंतर 'सम' की अवधारणा से संबंधित है। हिन्दुस्तानी संगीत में सम अत्यंत महत्वपूर्ण है। कलाकार की अनेक लयात्मक रचनाओं का अंतिम लक्ष्य सम पर आना होता है। तिहाई, चक्रदार, बोल और अन्य लयकारी संरचनाओं का प्रभाव प्रायः सम पर उनके सटीक आगमन से निर्धारित होता है। कर्नाटक संगीत में भी चक्र की पूर्णता और आरंभ–बिन्दु का महत्व है, लेकिन वहाँ हिन्दुस्तानी संगीत के 'सम' और 'खाली' जैसी शब्दावली के स्थान पर ताल की क्रिया, अंग और चक्रात्मक संरचना का अलग ढाँचा मिलता है।

तीसरा महत्वपूर्ण कर्नाटक संगीत में खाली के लिए विसर्जितम शब्द का प्रयोग किया गया है, जो तीन प्रकार की क्रमशः– पताक विसर्जितम, कृषय विसर्जितम तथा सर्पिणी विसर्जितम मानी जाती है।

चौथा अंतर लयकारी के स्वरूप में दिखाई देता है। हिन्दुस्तानी संगीत में दुगुन, तिगुन, चौगुन आदि के साथ अनेक प्रकार की संलांतप का प्रयोग होता है। तबला वादक कायदा, रेला, तुकड़ा, गत, परन, चक्रदार आदि के माध्यम से लय की विविधता प्रस्तुत करता है। कर्नाटक संगीत में भी लय की गणितीय संभावनाओं का अत्यंत विस्तृत प्रयोग होता है। तिस्रम, नादै, कण्डम्, मिश्र आदि संरचनाओं तथा विभिन्न गति–विन्यासों से जटिल लयात्मक संरचनाएँ निर्मित की जाती हैं।

पाँचवाँ अंतर तालवाद्यों की भूमिका से संबंधित है। हिन्दुस्तानी संगीत में तबला आज सबसे लोकप्रिय तालवाद्य है। ध्रुपद परम्परा में पखावज का विशेष महत्व है। तबला वादक अनेक बार मुख्य गायक या वादक के साथ सक्रिय संवाद करता है। कर्नाटक संगीत में मृदंगम् प्रमुख तालवाद्य है। मृदंगम् वादक केवल समय बनाए रखने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि रचना की लयात्मक संरचना को विस्तार देता है और स्वतंत्र लयात्मक प्रस्तुतियाँ भी करता है। दक्षिण भारतीय संगीत में घटम्, कंजीरा और मोरचंग जैसे वाद्य भी लय की विविधता बढ़ाते हैं।

छठा अंतर तालों की वर्गीकरण–पद्धति में है। हिन्दुस्तानी संगीत में तालों को मुख्यतः मात्राओं, विभागों और ताली–खाली के आधार पर समझा जाता है। इसके विपरीत कर्नाटक संगीत में सात मूल ताल और पाँच जातियाँ एक व्यवस्थित गणितीय ढाँचा निर्मित करती हैं। इसलिए कर्नाटक ताल प्रणाली को समझने के लिए गणितीय संरचना और अंग–विन्यास का ज्ञान अत्यंत आवश्यक है।

फिर भी दोनों प्रणालियों में अनेक समानताएँ हैं। दोनों में ताल चक्रीय है; दोनों में निश्चित मात्रा अथवा समय–इकाइयों का क्रम दोहराया जाता है; दोनों में लय का महत्व है; दोनों में ताल की पहचान के लिए मौखिक बोलों या अक्षरों का प्रयोग होता है; दोनों में विभिन्न गति और लयकारी संभव है। दोनों प्रणालियों में कलाकार ताल की सीमाओं के भीतर अत्यधिक रचनात्मक स्वतंत्रता प्राप्त करता है। तुलनात्मक अध्ययनों में भी इन दोनों प्रणालियों के बीच चक्रीयता, हाथ की क्रियाओं, बोल तथा लय के संदर्भ में कई समानताएँ रेखांकित की गई हैं।

हालाँकि, किसी हिन्दुस्तानी ताल और कर्नाटक ताल को केवल मात्राओं की संख्या के आधार पर समान मानना उचित नहीं है। उदाहरण के लिए 16 मात्राओं का तीनताल और किसी कर्नाटक ताल की समान कुल गणना होने पर भी दोनों का आंतरिक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

विभाजन, अंग–विन्यास और प्रस्तुति अलग हो सकती है। इसलिए दोनों प्रणालियों के बीच केवल 'मात्रा–समानता' के आधार पर प्रत्यक्ष समतुल्यता स्थापित करना संगीतशास्त्रीय रूप से सीमित दृष्टिकोण होगा। तुलनात्मक स्रोत भी यह संकेत देते हैं कि दोनों प्रणालियों के मूलभूत अंतर के कारण इनके बीच पूर्ण समानता स्थापित करना संभव नहीं है।

इतिहास की दृष्टि से देखा जाए तो दोनों प्रणालियाँ पूर्णतः अलग–अलग स्रोतों से उत्पन्न नहीं हुईं। प्राचीन भारतीय संगीतशास्त्रीय परम्परा ने दोनों को वैचारिक आधार प्रदान किया। संगीत रत्नाकर जैसे मध्यकालीन ग्रंथों ने भारतीय संगीत में राग और ताल की अवधारणाओं को व्यवस्थित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बाद के काल में क्षेत्रीय संगीत–परम्पराओं, राजाश्रय, मंदिर–परम्परा, दरबारी संस्कृति और सामाजिक परिवर्तनों ने दोनों प्रणालियों को अलग–अलग दिशा में विकसित किया।

हिन्दुस्तानी संगीत पर मध्यकालीन भारतीय इतिहास, विशेषतः उत्तर भारत की दरबारी एवं सूफी सांस्कृतिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ा। दूसरी ओर कर्नाटक संगीत का विकास दक्षिण भारतीय मंदिरों, भक्ति आन्दोलन और संगीतकारों की परम्परा के साथ गहरे रूप में जुड़ा रहा। फलतः दोनों प्रणालियों की ताल अभिव्यक्ति में भी सांस्कृतिक भिन्नता दिखाई देती है।

आधुनिक समय में दोनों ताल प्रणालियों के बीच संवाद बढ़ा है। संगीत विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, संगीत सम्मेलनों और अंतरराष्ट्रीय मंचों पर हिन्दुस्तानी तथा कर्नाटक संगीत के कलाकार एक–दूसरे की प्रणालियों को समझने और प्रयोग करने का प्रयास कर रहे हैं। संगीत की नई विधाओं और फ्यूजन प्रयोगों में दोनों परम्पराओं के तालवाद्यों तथा लयकारी का समन्वय भी दिखाई देता है। फिर भी इस प्रकार के प्रयोग तभी सार्थक हो सकते हैं जब दोनों प्रणालियों की मूल संरचना और सांस्कृतिक विशिष्टता को समझकर उनका प्रयोग किया जाए।

महत्व– उत्तर भारतीय एवं दक्षिण भारतीय ताल प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन भारतीय संगीतशास्त्र के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। सबसे पहले, इससे भारतीय संगीत की आंतरिक विविधता को समझने में सहायता मिलती है। भारत में संगीत की एक व्यापक परम्परा होते हुए भी क्षेत्रीय विकास ने अनेक विशिष्ट शैलियों को जन्म दिया है। ताल प्रणालियाँ इस विविधता का उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

दूसरे, यह अध्ययन भारतीय संगीत की वैज्ञानिक और गणितीय प्रकृति को समझने में सहायक है। विशेष रूप से कर्नाटक संगीत की जाति, अंग और गति–व्यवस्था तथा हिन्दुस्तानी संगीत की मात्रा, विभाग और संलांतप यह प्रमाणित करते हैं कि भारतीय संगीत में समय का संगठन अत्यंत सूक्ष्म और व्यवस्थित है।

तीसरे, संगीत शिक्षा की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन उपयोगी है। यदि विद्यार्थी दोनों प्रणालियों की समानताओं और अंतरों को समझता है, तो उसके लिए लय की व्यापक अवधारणा को ग्रहण करना सरल हो जाता है। विश्वविद्यालयों और संगीत संस्थानों में भी हिन्दुस्तानी तथा कर्नाटक तालों के तुलनात्मक अध्ययन को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाता है। दिल्ली विश्वविद्यालय के संगीत पाठ्यक्रम में भी कर्नाटक और हिन्दुस्तानी ताल प्रणालियों के तुलनात्मक अध्ययन तथा विभिन्न मात्राओं वाले तालों की तुलना को स्थान दिया गया है।

चौथे, यह अध्ययन तालवाद्य परम्पराओं के विकास को समझने में उपयोगी है। तबला और मृदंगम् केवल संगत वाद्य नहीं हैं, बल्कि वे अपने–अपने संगीत तंत्र की लयात्मक सौंदर्य–दृष्टि का प्रतिनिधित्व करते हैं।

पाँचवें, दोनों प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन भारतीय सांस्कृतिक एकता को भी स्पष्ट करता है। बाह्य रूप से दोनों ताल प्रणालियाँ अलग दिखाई देती हैं, लेकिन उनके भीतर चक्रीय लय, गणना, गति, पुनरावर्तन और रचनात्मकता जैसे समान आधारभूत सिद्धांत मौजूद हैं। इससे 'विविधता में एकता' की भारतीय सांस्कृतिक अवधारणा को संगीत के माध्यम से समझा जा सकता है।

छठे, आधुनिक संगीत और अंतरराष्ट्रीय संगीत संवाद के संदर्भ में भी इसका विशेष महत्व है। आज भारतीय ताल प्रणाली को विश्व के अनेक संगीतकारों द्वारा जटिल लयात्मक संरचना के उदाहरण के रूप में समझा जा रहा है। दोनों प्रणालियों का वैज्ञानिक अध्ययन विश्व संगीत में भारतीय लय की विशिष्ट पहचान को और मजबूत कर सकता है।

उत्तर भारतीय एवं दक्षिण भारतीय ताल प्रणाली का संबंध– भारतीय शास्त्रीय संगीत में ताल का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है। ताल संगीत की वह व्यवस्थित पद्धति है, जिसके माध्यम से समय, मात्रा, लय तथा संगीत की गति को नियंत्रित किया जाता है। भारतीय शास्त्रीय संगीत की दो प्रमुख परंपराएँ हैंकृउत्तर भारतीय हिंदुस्तानी संगीत पद्धति और दक्षिण भारतीय कर्नाटक संगीत पद्धति। दोनों की ताल प्रणालियों में अनेक समानताएँ हैं, लेकिन उनकी संरचना, गणना, प्रस्तुति और व्यवहार में कुछ महत्त्वपूर्ण अंतर भी दिखाई देते हैं।

उत्तर भारतीय ताल प्रणाली में तीनताल, झपताल, एकताल, रूपक, दादरा और कहरवा प्रमुख हैं। इस पद्धति में ताल की पहचान मात्रा, विभाग, सम, ताली और खाली के माध्यम से की जाती है। उदाहरण के लिए, तीनताल में 16 मात्राएँ होती हैं, जो चार विभागों में विभाजित हैं। झपताल में 10 मात्राएँ तथा दादरा में 6 मात्राएँ होती हैं। उत्तर भारतीय संगीत में तबला और पखावज प्रमुख ताल वाद्य हैं। इसमें ताल के बोल, ठेका, तिहाई, लयकारी और विभिन्न प्रकार की बंदिशों का विशेष महत्त्व है।

इसके विपरीत, दक्षिण भारतीय कर्नाटक संगीत की ताल प्रणाली अधिक व्यवस्थित अंग–आधारित संरचना पर विकसित हुई है। इसमें सात प्रमुख तालों ध्रुव, मठ, रूपक, झम्पा, त्रिपुट, अट और एक ताल का विशेष स्थान है। इन तालों का निर्माण लघु, द्रुतम् और अणुद्रुत जैसे अंगों के आधार पर होता है। लघु की मात्राएँ जाति के अनुसार बदलती हैं, जिससे विभिन्न ताल–रूप निर्मित होते हैं। दक्षिण भारतीय संगीत में आदि ताल, जो सामान्यतः चतुरश्र जाति त्रिपुट ताल का रूप है, अत्यंत प्रचलित है। यहाँ मृदंगम प्रमुख ताल वाद्य है, जबकि घटम, कंजीरा और मोरसिंग भी ताल संगति में उपयोग किए जाते हैं।

दोनों ताल प्रणालियों के बीच मूल संबंध लयबद्धता, समय–चक्र और मात्राओं की गणना में निहित है। दोनों में विलंबित, मध्य और द्रुत लय का प्रयोग किया जाता है। साथ ही, कलाकार ताल के निश्चित चक्र में संगीत की रचना और प्रस्तुति करते हैं। उत्तर भारतीय संगीत में तिहाई तथा दक्षिण भारतीय संगीत में कोरवई जैसी रचनात्मक लय–प्रक्रियाएँ इस समानता को स्पष्ट करती हैं।

हालाँकि, उत्तर भारतीय ताल प्रणाली में सम, ताली और खाली की भूमिका प्रमुख होती है, जबकि दक्षिण भारतीय प्रणाली में ताल के अंगों तथा जातियों के आधार पर गणना अधिक व्यवस्थित रूप से की जाती है। दोनों की प्रस्तुति में क्षेत्रीय सांस्कृतिक प्रभाव भी दिखाई देते हैं।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

निष्कर्ष– उत्तर भारतीय और दक्षिण भारतीय ताल प्रणालियाँ भारतीय शास्त्रीय संगीत की दो अत्यंत विकसित और समृद्ध लयात्मक परम्पराएँ हैं। दोनों की ऐतिहासिक जड़ें भारतीय संगीतशास्त्र की व्यापक परम्परा में निहित हैं, लेकिन समय, क्षेत्र, संस्कृति और संगीत–प्रयोग की भिन्न परिस्थितियों ने इनके स्वरूप को अलग–अलग ढंग से विकसित किया है।

हिन्दुस्तानी ताल प्रणाली में मात्रा, विभाग, सम, ताली, खाली, आवर्तन और ठेका की अवधारणाएँ केंद्रीय हैं। तीनताल, झपताल, एकताल, रूपक, दादरा, कहरवा आदि इसके प्रमुख उदाहरण हैं। ताल का ठेका और सम पर आगमन हिन्दुस्तानी संगीत की प्रस्तुति में विशेष महत्व रखते हैं। इसके विपरीत कर्नाटक ताल प्रणाली में लघु, द्रुत, अणुद्रुतम्, जाति, अंग, क्रिया और गणितीय विन्यास विशेष महत्व रखते हैं। सुलादि सप्त ताल इसकी मूल संरचना है, जो पाँच जातियों के साथ मिलकर 35 प्रमुख ताल–विन्यासों की संभावना प्रदान करती है।

दोनों प्रणालियों में अंतर होने के बावजूद उनकी मूल आत्मा एक है–लय का अनुशासन और रचनात्मक स्वतंत्रता का संतुलन। हिन्दुस्तानी संगीत में कलाकार ठेका और सम के आधार पर लयात्मक विस्तार करता है, जबकि कर्नाटक संगीत में अंग, जाति और गणितीय संरचना के आधार पर लय का अत्यंत सूक्ष्म विकास होता है। इस दृष्टि से एक प्रणाली को दूसरी से श्रेष्ठ मानना उचित नहीं है। दोनों अपने–अपने ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भों में पूर्ण तथा विशिष्ट हैं।

अतः उत्तर भारतीय एवं दक्षिण भारतीय ताल प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन केवल दो संगीत पद्धतियों के अंतर को समझने का माध्यम नहीं है, बल्कि यह भारतीय संगीत की वैज्ञानिकता, गणितीयता, सांस्कृतिक विविधता और सौंदर्यात्मक एकता को समझने का महत्वपूर्ण साधन है। वर्तमान समय में आवश्यकता इस बात की है कि दोनों ताल परम्पराओं का गहन अध्ययन किया जाए और आधुनिक तकनीक, संगीत शिक्षा तथा अंतरराष्ट्रीय संगीत संवाद के माध्यम से उनकी समृद्ध विरासत को नई पीढ़ी तक पहुँचाया जाए।

निष्कर्षतः, उत्तर भारतीय एवं दक्षिण भारतीय ताल प्रणालियाँ अपनी विशिष्टताओं के बावजूद भारतीय संगीत की साझा परंपरा का प्रतिनिधित्व करती हैं। इनका तुलनात्मक अध्ययन भारतीय संगीत की एकता, विविधता और लयात्मक समृद्धि को समझने में सहायक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भरत मुनि – नाट्यशास्त्र, विभिन्न संस्करण एवं अनुवाद।
2. शाङ्र्गदेव – संगीत रत्नाकर, विभिन्न संस्करण।
3. वेंकटमखी – चतुर्दण्डी प्रकाशिका।
4. भातखण्डे, विष्णु नारायण – हिन्दुस्तानी संगीत पद्धतिः क्रमिक पुस्तक मालिका।
5. चौधरी, सुभद्रा – भारतीय संगीत में ताल एवं रूप–विधान, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर।
6. सेन, अरुण कुमार – भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, संगीत नाटक अकादमी।
7. मिश्र, छोटे लाल – ताल प्रबन्ध, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
8. Clayton, Martin - Time in Indian Music: Rhythm, Metre, and Form in North Indian Rag Performance. Oxford University Press.
9. Powers, Harold - The Structure of Indian Music.
10. Rowell, Lewis - Music and Musical Thought in Early India.
11. Bhatkhande, V. N. - A Comparative Study of Some Hindustani and Carnatic Musical Concepts.
12. Bindu, Karin – "The Fascinating Generation of the South Indian Suladi Talas."
13. Frontiers in Digital Humanities – "Aspects of Tempo and Rhythmic Elaboration in Hindustani Music: A Corpus Study."
14. University of Delhi – M.A. Percussion Syllabus: Hindustani and Karnatak Tala Comparative Study.

*****